International Journal of Sanskrit Research 2022; 8(2): 28-33

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2022; 8(2): 28-33
© 2022 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 16-01-2022
Accepted: 26-02-2022

कौशल किशोर प्रजापत
शोधछात्र (पी.एच.डी),
जवाहरलाल नेहरू वि. वि. नई दिल्ली, भारत

Corresponding Author:
कौशल किशोर प्रजापत
शोधछात्र (पी.एच.डी),
जवाहरलाल नेहरू वि. वि. नई दिल्ली, भारत

अभिज्ञानशाकुन्तलम् : पर्यावरणीय प्रसङ्गों का अध्ययन और वर्तमान उपादेयता (प्रकृति और मानव के सम्बन्धों के आलोक में)

कौशल किशोर प्रजापत

सारांश
यह शोधपत्र अभिज्ञानशाकुन्तलम् नाटक को आधार बनाकर संस्कृत साहित्य में पर्यावरण चिन्तन को प्रस्तुत करता है। नाटक के सभी सात अंकों में कथावस्तु के साथ प्रकृति या पर्यावरण की समानान्तर प्रस्तुति भी करता है। वर्तमान पर्यावरण की समस्या को देखते हुये नाटक में अपने पात्रों व उनसे सम्बन्धित वर्णन में सन्तुलित प्रकृति व शुद्ध पर्यावरण बनाने का पारम्परिक व सर्वसुलभ समाधान का संदेश भी निहित है।

कूट शब्द : पर्यावरणीय प्रसङ्गों, प्रकृति और मानव के सम्बन्ध, अभिज्ञानशाकुन्तलम् नाटक

प्रस्तावना
भारतीय चिन्तन परम्परा साहित्य, धर्म-दर्शनादि के केन्द्र में प्रकृति और पुरूष समानान्तर विद्यमान हैं। ज्ञान के आदिस्रोत वैदिक संहिताओं में ही प्रकृति के मूतभूत तत्त्वों का देवतास्वरूप में मंत्रस्तुति अग्नि सूक्त, सूर्य सूक्त, वायु सूक्त, वरूण सूक्त, पृथ्वी सूक्त आदि इसका सर्वसमर्थित प्रमाण है हमारे धर्मशास्त्रों व उपनिषदों के वर्णन इस मनोदशा को प्रदर्शित करते हैं। वेद हमें पगपग पर पर्यावरण संरक्षण का संदेश देते हैं। आश्रम व्यवस्था में संपूर्ण मानव जीवन को चार आश्रमों में विभक्त किया गया है। वेदों में वर्णित आश्रमपद्धति का विभाजन प्रकृति पर आधारित था। इन चार आश्रमों में तीन आश्रमब्रह्मचर्य, वानप्रस्थ और संन्यास तो पूरी तरह से प्रकृति के साथ ही व्यतीत होते थे। विद्याध्ययन के लिए गुरुकुल सदैव वन प्रदेश एवं नदी तट पर होते थे। यहां बालक प्रकृति के सान्निध्य में पलता, बढता एवं विद्याध्ययन करता था। वानप्रस्थ की प्राप्ति गृहस्थी को पुनः वन में जाकर वास करने से होती थी। संस्कृत के लौकिक साहित्य में महाकवि कालिदास का प्रत्येक ग्रंथ पर्यावरण, प्रकृति से मानव को जोड़कर रचा गया है, जिनके प्रेरणास्रोत रामायण-महाभारत महाकाव्य है । प्रकृति और मानव के अटूट प्रेम का वर्णन करने वाली कालिदास की हर कृति में ये दोनों अन्योन्याश्रित है। कालिदास ने हमेशा अभिव्यक्ति के लिए प्रकृति का अवलम्बन लिया है।

अभिज्ञानशाकुन्तलम् इसका श्रेष्ठ उदाहरण है, जहां मानव और प्रकृति समानान्तर मुखर है। मानव अपनी चेतना का विकास आसपास की प्रकृति से ही करता है। प्राचीन भारत में मानव का सर्वप्रथम ध्येय प्राकृतिक व्यवस्था के साथ सामंजस्य बनाए रखना था।

पर्यावरण – सर्वप्रथम पर्यावरण शब्द को स्पष्ट करना आवश्यक है, जो कि प्रस्तुत शोधपत्र की आधारभूमि है। बहुत समय तक पर्यावरण का अर्थ 'वातावरण' समझा जाता रहा है, किन्तु वर्तमान में पर्यावरण का अर्थ इतना विस्तृत हो चुका है कि प्रकृति का कोई भी घटक इससे अछूता नहीं रहा है। इसमें संपूर्ण पृथ्वी, उसका वातावरण और इस धरती पर विद्यमान हर जैविक-अजैविक वस्तु को पर्यावरण का हिस्सा मान लिया गया है। पर्यावरण एक व्यापक शब्द है, जो उस संपूर्ण शक्तियों परिस्थितियों एवं वस्तुओं का योग है। यह मानव को परावृत,आच्छादित करता हैं तथा उसके क्रियाकलापों को अनुशासित करता हैं। पर्यावरण मूलतः दो शब्दों 'परि' व 'आवरण' के योग से बना है, जिसका अर्थ है 'चारों ओर से घिरा हुआ' । मनुष्य प्रकृति का पुत्र माना जाता है। भारतीय दर्शनशास्त्र में मानव शरीर को पञ्चमहाभूत आकाश, वायु, अग्नि, जल और पृथ्वी से निर्मित बताया गया है। उसका समस्त जीवनचक्र प्रकृति की ही देन है। पर्वत, नदी, तालाब, शस्य श्यामला भूमि और सुवासित वायु हमारे जीवन को स्वच्छ और सुखद बनाते हैं।

चेम्बर्स ट्वैन्टीएथ सेन्चुरी डिक्शनरी में इनवायरमेंट अर्थात् पर्यावरण का अर्थ विकास या वृद्धि को प्रभावित करने वाली परिस्थितियों से है। देश के पर्यावरण संरक्षण अधिनियम-1986 की धारा 2 (क) के अनुसार पर्यावरण में वायु,जल, भूमि, मानव, पशु-पक्षी, जीव-जन्तु, वनस्पति, सूक्ष्मातिसूक्ष्म जीवाणु आदि और उनके बीच विद्यमान अन्तर्सम्बन्ध सम्मिलित है।

अभिज्ञानशाकुन्तलम् में पर्यावरणीय प्रसंग

महाकवि कालिदास ने नाट्यकृति अभिज्ञानशाकुन्तलम् में अपनी प्रतिभा का सर्वस्व अन्तर्ग्रथित किया है, तभी तो पाश्चात्य विद्वान गेटे आदि इसकी प्रसंशा किये विना रहते हैं। यहां समस्त मानवीय क्रियाकलापों का प्रकृति ही परिवेश है। जितना मानव मुखर है, उससे कहीं अधिक प्रकृति मुखर है। कभी-कभी तो मानवीय मनोभावों को प्रकृति ही प्रकट करती है। नायिका शकुन्तला और नायक दुष्यन्त सृष्टि के मुख्य दो पात्रों प्रकृति और पुरूष के रूप में प्रतिबिम्बित है। जिस प्रकार यह नाटक नायक-नायिका पर केन्द्रित है, उसी प्रकार सृष्टि भी प्रकृति और पुरूष पर आश्रित होती है। भारतीय दर्शन(सांख्य) में भी प्रकृति और पुरूष के संयोग को सृष्टि के सर्जन का प्रधान कारण माना गया है और उनके वियोग को संहार की संज्ञा दी गई है। नाटक में सर्वत्र प्रेम-प्रणय कथा के समानान्तर ही प्रकृति के सजीव-निर्जीव अंशों (वृक्ष-लता, कमल, मृग, वायु, चन्द्रमा आदि) का प्रयोग किया गया है। उपमा, उत्प्रेक्षा समासोक्ति आदि अलंकारों की सहायता से उचित बिम्बविधान किया गया है। इस प्रकार विषय के अनुसार अभिज्ञानशाकुन्तलम् नाटक का चयन समीचीन है

अभिज्ञानशाकुन्तलम् के प्रथम श्लोक में ही कालिदास ने अष्टमूर्ति शिव के स्वरूप की वन्दना से संसार के सर्जन और पालन-पोषण में आदिस्रोत जल, अग्नि, आकाश, पृथिवी, वायु और सूर्य-चन्द्रमा के महत्त्व को अभिव्यक्त किया है, जो प्रत्येक जीव की उपस्थिति के लिये प्राकृतिक या पर्यावरणिक आधार है-

> या सृष्टिः स्रष्टुराद्या वहति विधिहुतं या हविर्या च होत्री
> ये द्वे कालं विधत्तः श्रुतिविषयगुणा या स्थिता व्याप्य
> विश्वम्। यामाहुः सर्वबीजप्रकृतिरिति यया प्राणिनः
> प्राणवन्तः प्रत्यक्षाभिः प्रसन्नस्तनुभिरवतु
> वस्ताभिरष्टाभिरीशः।।[1]

जिस सृष्टि को(जल) ब्रह्मा ने सबसे पहले बनाया, वह अग्नि जो विधि के साथ दी हुई हवन सामग्री ग्रहण करती है, वह होता जिसे यज्ञ करने का काम मिला है, वह चन्द्र और सूर्य जो दिन और रात का समय निर्धारित करते हैं, वह आकाश जिसका गुण शब्द हैं और जो संसार भर में रमा हुआ है, वह पृथ्वी जो सब बीजों को उत्पन्न करने वाली बताई जाती है, और वह वायु जिसके कारण सब जीव जी रहे हैं अर्थात् उस सृष्टि, अग्नि, होता, सूर्य, चन्द्र, आकाश, पृथ्वी और वायु इन आठ प्रत्यक्ष रूपों में जो भगवान शिव सबको दिखाई देते हैं, वे शिव आप लोगों का कल्याण करें। ये सभी जीवमात्र के लिये शिवरूप अर्थात् कल्याणकारी है। प्रस्तुत मंगलाचरण में अपने आराध्य देव की स्तुति के व्याज से पर्यावरण की स्तुति की गई है, जो हमें जीवन प्रदान करता है। ये ही समस्त प्राकृतिक स्वरूप के मूल यौगिक हैं।

इसके पश्चात् प्रथमांक में शिकार करते हुये राजा दुष्यन्त का वर्णन किया गया है,जो कि वर्तमान परिवेश में प्रतिबन्धित

1. अभिज्ञानशाकुन्तलम् 1.1

है। यद्यपि यह प्रसङ्ग पर्यावरण के विरूद्ध है, किन्तु महाकवि ने भी अपने कविचातुर्य से इसे घटित होने से पूर्व ही 'आश्रममृगोऽयं न हन्तव्य इति' कह कर मृगया पर विराम लगाकर पर्यावरण हित में सन्निहित कण्व आश्रम का गरिमामय चित्रण प्रस्तुत किया है, जो वर्तमान लोलुप समाज को सही दिशा प्रदान कर सकता है। आश्रम में समस्त जीव,पशु-पक्षी मनुष्य को देखकर भी डर से नहीं भाग रहे है, अपितु विश्वस्त होकर वहीं ठहरे हुये है- 'विश्वासोपगमादभिन्नगतयः शब्दं सहन्ते मृगाः'।[2]

हरिणशावक भी निशंक होकर स्वभाव के विरूद्ध मन्द मन्द विचरण कर रहे है। वस्तुतः यह तपोभूमि का ही प्रभाव है जो इतने कातर स्वभाव वाले प्राणी को भी निर्भय बनाता है- 'नष्टाशंका हरिणशिशवो मन्दमन्दं चरन्ति'।[3]

अनुसूया के कथनानुसार कण्व को शकुन्तला से भी अधिक प्रिय आश्रम के वृक्ष हैं, तभी तो अपनी सुकोमल पुत्री को भी वे वृक्षों की देखभाल में लगा देते है-'त्वत्तोऽपि तातकण्वस्याश्रमवृक्षकाः प्रियतराः'।[4] किन्तु शकुन्तला भी न केवल पिता की आज्ञा से वरन् अपने सगे सम्बन्धियों के जैसे स्नेहवश उनकी देखभाल,सिंचाई आदि करती है- 'न केवलं तातनियोग एव अस्ति मे सोदरस्नेहोऽप्येतेषु'।[5] यह उदात्त वर्णन आधुनिक युवा पीढी को अवश्य ही पर्यावरण के प्रति सजग बनाने वाला है।

चतुर्थ अंक में मनुष्य और प्रकृति का परस्पर जो भावविह्वल,सहानुभूतिपरक,सोहार्दपूर्ण वर्णन मिलता है, वह अन्यत्र नितान्त दुर्लभ है। कारण यह है कि यहां न केवल भावप्रदर्शक मनुष्य(शकुन्तला आदि) को ही प्रकृतिप्रेमी दिखाने का प्रयास किया गया है बल्कि प्रकृति को भी मनुष्य से अधिक मनुप्रेमी चित्रित किया गया है । मनुष्य और प्रकृति के मध्य ऐसा अटूट प्रेमवर्णन अन्योन्य सम्बन्धों की पराकाष्ठा है, जहां दोनों ही एक-दूसरे के बिना अपूर्ण है। यह साहित्यजगत में पर्यावरण पर उपलब्ध प्रसंगों में अद्वितीय और अनुपम प्रतीत लगता है।

पातुं न प्रथमं व्यवस्यति जलं युष्मास्वपीतेषु या
नादत्ते प्रियमण्डनापि भवतां स्नेहेन या पल्लवम्।
आद्ये वः कुसुमप्रसूतिसमये यस्या भवत्युत्सवः
सेयं याति शकुन्तला पतिगृहं सर्वैरनुज्ञायताम्।।[6]

शकुन्तला के लिये आसपास की प्रकृति या पर्यावरणीय घटक पारिवारिक सदस्य से भी बढकर है,जिनकी सकुशलता में उसकी प्रसन्नता निहित है।वह आश्रमवृक्षों और पशु-पक्षियों को अन्न-जल देने के उपरान्त ही भोजन ग्रहण करती है। शकुन्तला को वृक्षों से प्राप्त अलंकरण प्रिय होते हुये भी स्नेहवश उनके पल्लवादि को धारण नहीं करती है। वृक्षों के नूतन पर्ण,पुष्प लगना ही उसके लिये उत्सव के समान है,जो उसको अपार आनन्द की प्राप्ति कराता है। पतिगृह जाने के अवसर पर भी आशीर्वाद स्वरूप वहां की प्रकृति से अनुमति देने की प्रार्थना की जा रही है,क्योंकि वे सभी प्रकृति के अनुकूल स्वभाव से चिर परिचित है,जो यात्रा को सुखद बनाती है। इस प्रकार यह पद्य अतिलघु होते हुये भी मानव और प्रकृति के सम्बन्धों के वर्णन में गागर में सागर की तरह है। सीमित शब्दों में असीमित अभिव्यक्ति को यह प्रकट करने की क्षमता रखता है।

अनुमतगमना शकुन्तला तरूभिरियं वनवासबन्धुभिः।[7]

पतिगृहप्रस्थान प्रार्थना के अनन्तर ही वनवासबन्धुवृक्षों द्वारा शकुन्तला को जाने की अनुमति देने का यह बडा ही पवित्र प्रसंग है, जहां वृक्षों के साथ परिजन की तरह व्यवहार किया गया है।

रम्यान्तरः कमलिनीहरितैः सरोभिश्छायाद्रुमैर्नियमितार्कमयूखताद्यः।
भूयात्कुशेशयरजोमृदुरेणुरम्याः शान्तानुकूलपवनश्च शिवश्च पन्थाः।।[8]

प्रस्तुत पद्य में शकुन्तला के पतिगृह गमनावसर पर अनुकूल पर्यावरण का प्रसाद गुण की शैली में सर्वानुकूलसंवेद्य वर्णन किया गया है। सुरम्य सरोवर में कमलिनी खिली हुई है, सघन वृक्षों के समूह से निकलती हुई सूर्य की किरणें मार्ग को प्रकाशित कर रही है। मार्ग में बिछी कुशशय्या (दूर्वा घास) गमन को सहज बना रही है। अनुकूल बहती पवन चलने के श्रम को कम करके लक्ष्य को सुलभ बना रहा है।

इन सबका आशय यही है कि यदि आप प्रकृति या पर्यावरण के प्रति संवेदनशील समसहानुभूत है, तो प्रकृति भी आपके प्रति आपसे ज्यादा संवेदना प्रकट अवश्य करेगी। वर्तमान वैज्ञानिक परिवेश में हमारे प्रसिद्ध वैज्ञानिक जगदीश चन्द्र बसु ने वृक्ष-पौधों को संवेदनशील सिद्ध किया है।

उद्गलितदर्भकवला मृगाः परित्यक्तनर्तना मयूराः।
अपसृतपाण्डुपत्रा मुञ्चन्त्यश्रूणीव लताः।।[9]

2. अभि.1.14
3. अभि. 1.15
4. अभि. अंक 1
5. अभि. अंक 1
6. अभि. 4.9
7. अभि. 4.10
8. अभि. 4.11
9. अभि. 4.12

मनुष्य के वियोग में प्रकृति किस तरह प्रभावित होकर अपना दुःख प्रकट करती है, उसी सन्दर्भ में यह श्लोक उद्धृत है। शकुन्तला के जाने से दुखी मृगों ने खायी हुई घास भी बाहर निकाल दी है, नाचकर अपनी खुशी प्रकट करने वाले मयूरों ने नाचना छोड दिया है। पीले हो जाने से अलग हो रहे पत्तों से मानो लतायें शकुन्तला के बिछोह में आंसू बहा रही हो।

श्यामाकमुष्टिपरिवर्धितको जहाति सोऽयं न पुत्रकृतकः पदवीं मृगस्ते।[10]

जैसे किसी प्रिय के छोडकर जाने के अवसर पर मनुष्य उसे आसानी से जाने की अनुमति न देकर उसे अपने पास ही रूके रहने को निवेदन करता है, उसी तरह शकुन्तला द्वारा पालित,अपने हाथों से अन्न खिलाया हुआ, पुत्र की तरह माना हुआ मृग उसे छोडने को तैयार ही नहीं है।

अनुभवति हि मूर्ध्ना पादपस्तीव्रमुष्णं शमयती परितापं छायया संश्रितानाम् ।[11]

वृक्ष अपनी शरण में आये आश्रितों को कडी और दुःसह धूप को सहकर भी छाया प्रदान कर उनके ताप को हरता है और यही हाल परहित में लगे महापुरूषों का भी होता है ,जो सदैव दुःख सहकर ,अपने प्राणों को संकट में डालकर भी त्रस्त आश्रितों का कल्याण करते हैं।

पिता कण्व द्वारा वृक्षसिंचन में नियुक्त शकुन्तला व उसकी सखियों के माध्यम से महाकवि ने वृक्ष माहात्म्य को बताया है, जिनका प्रत्येक अवयव परोपकार में समर्पित है। इसीलिये इस सुभाषित में कहा गया है-

भवन्ति नम्रास्तरवः फलागमैर्नवाम्बुभिर्दूरविलम्बिनो घना।
अनुद्धताः सत्पुरूषाः समृद्धिभिः स्वभाव एवैष परोपकारिणाम्।।[12]

वस्तुतः प्रकृति पूर्णरूपेण परोपकार का सनातन उदाहरण है, जो सदैव परहितार्थ में संलग्न है। सूर्य, चन्द्रमा, मेघ, पर्वत, सागर-नदियां, वृक्ष, वन-उपवन आदि सभी परोपकार के अवधूत है,जो बिना थके लगातार समस्त चराचर जगत को लाभान्वित करते आ रहे है।

छठे अंक में शची तीर्थ के माध्यम से जलस्रोतों के प्रति धार्मिक विश्वास या आस्था रखने से उनके पवित्रीकरण की ओर संकेत किया गया है, जो कि वर्तमान में जनसंख्या विस्फोट, औद्योगिक रसायनों के स्राव, मनुष्य के मल-अपशिष्ट से प्रदूषित हो चुके हैं। हमारी प्राचीन जीवनदायिनी नदियां गंगा,यमुना आदि पूर्णतः प्रदूषित हो गई हैं और सरस्वती तो लुप्त हो चुकी है। इन सभी को पुनर्जीवित करने हेतु वर्तमान सरकारें अथक प्रयास कर रही हैं। किन्तु सर्वाधिक जवाबदेही और जिम्मेदारी हम नागरिकों की है। हम सभी को समय रहते प्राकृतिक संसाधनों में आये विकार और असन्तुलन को दूर करना होगा नहीं इसके दुष्परिणामों को भुगतने के लिये तैयार रहना चाहिये।

सातवें अंक में 'जृम्भस्व रे सिंहशावक जृम्भस्व। मुख-व्यादानं विधेहि। दन्तास्ते गणयिष्यामि।'[13] वर्णन करते हुये महाकवि ने बालक सर्वदमन और सिंहशावक के प्रसंग में प्रकृति में सामान्यतः न देखे जाने वाले दृश्य को चित्रित किया है। यह शेर और बकरी के एक ही घाट से पानी पीने जैसा है। यह चित्रण वस्तुतः निश्छल प्रकृति का अनूठा संयोग है, जहां दो विरूद्ध स्वभाव वाले प्राणी एक-दूसरे के प्रति आश्वस्त है। यह महाकवि कालिदास का ही सर्जन कौशल है, जो सम्पूर्ण नाटक में मानवीय पात्रों के समकक्ष ही प्रकृति के प्रतिनिधि भी उसी तरह मुखरित देखे जा सकते हैं।

नाटक के अन्त में महाकवि द्वारा भरतवाक्य में भी अपने निर्विघ्नप्रारम्भ-परिसमाप्ति के इष्ट देवता से पृथिवी की प्रकृति के लिए मंगलकामना इस प्रकार की गई है- 'प्रवर्ततां प्रकृतिहिताय पार्थिवः.....।' जिसमें प्रकृति के कल्याण निमित्त प्रवर्तित शिवरूपी परमशक्ति से प्रार्थना की गई है।

वर्तमान परिवेश में पर्यावरण - हम विज्ञान की सहायता से जितने विकसित हुये है, उससे कहीं अधिक विनाशोन्मुखी होते जा रहे है। वैश्विक तापमान में निरन्तर वृद्धि, समुद्र जल के तापमान व स्तर उत्तरोत्तर वृद्धि, पोषक जलवायु में गिरावट, वृक्षावरण में अत्यधिक कमी से प्राणवायु की कमी आदि पर्यावरण में असन्तुलन से ही जनित है। मानवीय पर्यावरण पर 1972 का स्टाकहोम सम्मेलन वर्तमान पर्यावरण समस्याओं पर प्रथम प्रयास था, जिसमें विश्व के अधिकांश देशों ने हिस्सा लिया। इसी सम्मेलन में प्रत्येक वर्ष की 5 जून को पर्यावरण दिवस मनाने की शुरूआत की

10. अभि. 4.14
11. अभि. 5.7
12. अभि. 5.12
13. अभि. अंक 7

गई, क्योंकि पर्यावरण प्रदूषण देशविशेष की समस्या न होकर वैश्विक समस्या है,जिससे समस्त जीवजगत त्रस्त है। यह दिन प्रतिवर्ष हमारे द्वारा किये गये पर्यावरण सुधारों का मूल्यांकन करने का और इसमें निरन्तर सन्तुलन हेतु नये लक्ष्य निर्धारित करने का सुअवसर होता है,जो प्रत्येक मनुष्य को प्रकृतिप्रेमी व पर्यावरण सुधारक बनने को प्रेरित करता है। सतत् विकास की अवधारणा भी मनुष्य द्वारा पर्यावरण को श्रति पहुचाये बिना, भावी पीढी को ध्यान में रखकर प्राकृतिक संसाधनों का उपभोग तथा वर्तमान विकास दर को जारी रखने के रूप में परिभाषित की गयी है। ब्रैंटलैंड महोदय ने अपनी रिपोर्ट "ऑवर कॉमन फ्यूचर" में सतत विकास की अवधारणा प्रस्तुत की थी। यह आधुनिक समय में भविष्य के लिए विकास की कल्याणकारी अवधारणा है, जिसमें तृष्णामुक्त, विलासिता रहित सीमित संसाधनों से सन्तुष्टि भरा जीवन जीने का सन्देश निहित है। वर्तमान परिस्थितियों में प्रदूषित पर्यावरण को देखते हुये ग्रेट ब्रिटेन, फ्रांस, आयरलैण्ड, कनाडा जैसे देशों में 'क्लाईमेट इमरजेन्सी (जलवायु आपातकाल) को लागू कर दिया गया है, और अन्य देश भी इसकी तैयारियों में लगे हैं।

भारतीय परम्परा व वर्तमान में पर्यावरण परिवेश - प्राचीनकाल से प्रकृति हमारे लिए पूजनीय रही है, लेकिन आज हम पेड़ों को निर्दयता से काट रहे हैं तथा प्रकृति का निजी स्वार्थ के लिए विध्वंस कर रहे हैं, जबकि हमारे देश के पौराणिक ग्रंथों ने प्रकृति को देवी रूप में प्रतिष्ठित किया है। हमारे वेद, पुराण, उपनिषद् इस तथ्य के ज्वलंत प्रमाण हैं कि हमने सदैव प्रकृति देवी की पूजा की है। नदी-झरनें, पर्वत-पहाड, वृक्ष-वनस्पति, सूर्य-चन्द्रमा, प्राणवायु, मृदा आदि घटक वस्तुतः प्रकृति के समस्त उपादान हमारे लिए श्रद्धेय ही नहीं, अपितु परम पूजनीय हैं। वैदिककाल से आज तक शमी, पीपल, वट आदि वृक्ष भारत में अपने परोपकारी गुणों के कारण पूज्य रहे हैं। राजस्थान में विश्नोई समाज में शमी को विशेष तौर पर पूजते हैं। शमी के काटे जाने पर एक बार विश्नोई समाज ने प्रबल विरोध करते हुए अपने प्राणों की आहुति (खेजडली बलिदान) दे दी थी। इसी से प्रेरित टिहरी-गढवाल का 'चिपको आन्दोलन' (1972) स्वतंत्र भारत में वृक्षों को बचाने में सफल और प्रेरणास्रोत बना। वर्तमान सरकार में 'स्वच्छ भारत', 'नमामि गंगे' आदि कार्यक्रम भी पर्यावरण के प्रति भारतीय पारम्परिक चिन्तन की ही देन है। इसी तरह का चिन्तन-मनन अद्यावधि भारतीय जनमानस में विद्यमान है, किन्तु अभी वह अर्धचेतन अवस्था में प्रतीत होता है, क्योंकि हम पूर्णतया प्रकृति के स्वरूप का बोध होते हुये भी अनवरत उसको क्षति पहुंचाकर असन्तुलित कर रहे है। अतः वर्तमान परिवेश को देखते हुये प्राचीन प्रकृति प्रेमी भारतवर्ष के चिन्तन का व्यवहार में प्रयोग किया जाना प्रदूषित पर्यावरण और असन्तुलित प्रकृति का सर्वाधिक उपयुक्त उपचार सिद्ध हो सकता है, जहां सीमित संसाधनों में तृष्णामुक्त और पूर्णतया सन्तुष्ट सात्विक जीवन यापन किया जाता था।

उपसंहार

इस शोधपत्र में नाटक में पर्यावरणीय प्रसंगों का उल्लेख विशेषकर मानव और प्रकृति के प्रगाढ सम्बन्धों का चित्रण प्रस्तुत करने वाले उपादेय अंशों को ही निबद्ध किया गया है। नाटक में राजा दुष्यन्त को शकुन्तला का अभिज्ञान अंगूठी के माध्यम से कराया गया है, किन्तु यह महाकवि कालिदास का मानव को प्रकृति का अभिज्ञान कराने का भी संकेत है, जो राजा की तरह प्रकृति से विमुख हो चुका है। यहां अभिज्ञानशाकुन्तलम् में पर्यावरणीय प्रसंगों के अध्ययन से इस शोधपत्र में प्रधानतः मानव और प्रकृति के मध्य सहअस्तित्व, सहयोग व प्रेम को स्पष्ट करते हुये पर्यावरण की वर्तमान मुख्य समस्या को दूर किया जा सकता है, जो कि मानव का प्रकृति या पर्यावरण से विमुख होना है। नाटक में अन्ततः राजा दुष्यन्त शकुन्तला के प्रति पुनः अपने वास्तविक निश्छल प्रेम को प्राप्त कर लेता है, उसी प्रकार मानव भी प्रकृति के साथ अपने पुराने पावन सम्बन्ध को पुनर्स्थापित करें, जो अन्योन्य सह अस्तित्व, सहभागिता, सौहार्द के धरातल पर टिका हो।

सन्दर्भग्रन्थसूची

1. कालिदास, अभिज्ञानशाकुन्तलम्, सम्पादक-भट्ट, वसन्तकुमार, प्रकाशक-राष्ट्रीय पाण्डुलिपि मिशन 11, मानसिंह रोड,नई दिल्ली, प्रथम संस्करण-2013
2. कालिदास का प्रकृति-चित्रण, उपाध्याय, निर्मला, प्रकाशक- नीलाभ प्रकाशन, इलाहाबाद
3. प्रज्ञा, पर्यावरण विशेषांक, काशी हिन्दु विश्वविद्यालय, वाराणसी, अंक- 55, भाग-2, 2009-10
4. कालिदास के काव्यों में पर्यावरण चेतना, कुमार, अजय, प्रकाशक- कला प्रकाशन, वाराणसी, प्रथम संस्करण-2008

5. संस्कृत साहित्य का इतिहास-उपाध्याय, बलदेव, प्रकाशक- शारदा मन्दिर, वाराणसी, पंचम संस्करण-1958
6. संस्कृत साहित्य का समीक्षात्मक इतिहास- द्विवेदी, कपिलदेव, प्रकाशक-रामनारायण लाल विजय कुमार, 2018
7. महाकवि कालिदास-तिवारी, रविशंकर, चौखम्बा प्रकाशन